गरजपाल की चिट्ठी

हिन्दी ADDA

अनुराग शर्मा

गरजपाल की चिट्ठी

दफ्तर के सारे कर्मचारी मेज के गिर्द इकट्ठे होकर खाना खा रहे हैं और इधर-उधर के किस्से सुना रहे हैं। रोज का ही नियम है। दिन का यह आधा घंटा ही सबको अपने लिए मिल पाता है। सब अपना-अपना खाना एक-दूसरे के साथ बाँटकर ही खाते हैं। अगर आपको इस दफ्तर के किसी भी कर्मचारी से मिलना हो तो यह सबसे उपयुक्त समय है। पूरे स्टाफ को आप यहाँ एक साथ पाएँगे सिवाय एक गरजपाल के। गरजपाल जी

इस समय अपनी सीट पर बैठकर चिट्ठियाँ लिख रहे होते हैं। सारी मेज पर तरह-तरह के रंग-बिरंगे छोटे-बड़े लिफाफे फैले रहते थे। लंच शुरू होने के बाद कुछ देर वे चौकन्नी निगाहों से इधर-उधर देखते हैं। जब उन्हें इत्मीनान हो जाता है कि सब ने खाना शुरू कर दिया है तो उनका पत्र-लेखन शुरू हो जाता है। जब तक हम लोग खाना खाकर वापस अपनी जगहों पर आते हैं, गरजपाल जी अपनी चिट्ठियों को एक थैले में रखकर नजदीकी डाकघर जा चुके होते हैं।

शुरू में मैंने उन्हें हमारे सामूहिक लंच में लाने की असफल कोशिश की थी। पर जल्दी ही मुझे समझ आ गया कि गरजपाल जी एकांत के यह तीस मिनट अपनी खतो-किताबत में ही इस्तेमाल करना पसंद करते हैं। वे निपट अकेले थे। अधेड़ थे मगर शादी नहीं हुई थी। न बीवी न बच्चा। माँ-बाप भी अल्लाह को प्यारे हो चुके थे। आगे नाथ न पीछे पगहा। एक साल पहले ही दिल्ली से तबादला होकर यहाँ आए थे। प्रकृति से एकाकी व्यक्तित्व था, दफ्तर में किसी से भी आना-जाना न था। सिर्फ मतलब की ही बात करते थे। मुझ जैसे जूनियर से तो वह भी नहीं करते थे।

पूरे दफ्तर में उनके पत्र-व्यवहार की चर्चा होती थी। लोग उनसे घुमा-फिराकर पूछते रहते थे। एकाध लोग लुक-छिपकर कभी उनके पत्र का मजमून तो कभी लिफाफे का पता पढ़ने की कोशिश भी करते थे मगर सफल न हुए। ऐसी अफवाह थी कि बड़े बाबू एहसान अली ने तो चपरासी शीशपाल को बाकायदा पैसे देकर निगरानी के काम पर लगा रखा है। मगर गरजपाल जी आसानी से काबू में आने वाले जीव नहीं थे। अन्य लोग अपना हर व्यक्तिगत काम दफ्तर के चपरासियों से कराते थे मगर मजाल है जो गरजपाल जी ने अपनी एक भी चिट्ठी डाक में डालने का काम कभी किसी चपरासी को सौंपा हो।

शीशपाल ने बहुत बार अपना लंच जल्दी से पूरा करके उनका हाथ बाँटने की कोशिश की मगर गरजपाल जी की चिट्ठी उसके हाथ कभी न आई। उसकी सबसे बड़ी सफलता यह पता लगाने में थी कि यह चिट्ठियाँ दिल्ली जाती हैं। सबने अपने-अपने अनुमान लगाए। किसी को लगता था कि उनके कुछ रिश्तेदार शायद अभी भी काल के गाल से बचे रह गए थे। मगर यह कयास जल्दी ही खारिज हो गया क्योंकि किसी बूढ़े ताऊ या काकी के लिए रंग-बिरंगे लिफाफों की कोई जरूरत न थी। काफी सोच विचार के बाद बात यहाँ आकर ठहरी के जरूर दिल्ली में उनका कोई चक्कर होगा।

कहानियाँ इससे आगे भी बढ़ी। कुछ कल्पनाशील लोगों ने उनकी इस अनदेखी अनजानी सखि के लिए एक नाम भी गढ़ लिया - वासंती। वासंती के नाम की चिट्ठी

जाती तो रोज थी मगर किसी ने कभी वासंती की कोई चिट्ठी आते ने देखी। शीशपाल आने वाली डाक का मुआयना बड़ी मुस्तैदी से करता था। जिस दिन वह छुट्टी पर होता, वासंती की चिट्ठी ढूँढ़ने की जिम्मेदारी एहसान अली खुद ले लेते। कहने की जरूरत नहीं कि उनका काम कभी बना नहीं। वासंती की चिट्ठी किसी को कभी नहीं मिली। हाँ, कभी-कभार गरजपाल जी के पुराने दफ्तर के किसी सहकर्मी का पोस्ट-कार्ड जरूर आ जाता था।

समय बीतता गया। अहसान अली और शीशपाल का जोश भी काफी हद तक ठंडा पड़ गया। हाँ, गरजपाल बिल्कुल नहीं बदले। न तो उन्होंने किसी सहकर्मी से दोस्ती की और न ही चिट्ठी लिखने का राज किसी से बाँटा। ज्यादातर लोग गरजपाल के बिना ही खाना खाने के आदी हो गए। इसी बीच सुनने में आया कि गरजपाल का तबादला उनके गाँव के पास के दफ्तर में हो गया है। किसी को कोई खास फर्क नहीं पड़ा। पड़ता भी कैसे? गरजपाल की कभी किसी से नजदीकी ही नहीं रही थी। पता ही न चला कब उनके जाने का दिन भी आ गया। दफ्तर में सभी जाने वालों के लिए एक अनौपचारिक सा विदाई समारोह करने का रिवाज था। सो तैयारियाँ हुई। उपहार तय होने लगे और भाषण भी लिखे गए। कभी भी साथ बैठकर खाना न खाने की वजह से नत्थूलाल एंड कंपनी तो गरजपाल को विदाई पार्टी देने के पक्ष में ही नहीं थे। मगर हमारे प्रबंधक महोदय जी अड़ गए कि यदि पार्टी नहीं होगी और उपहार भी नहीं आएगे तो "मन्नै के मिलेगा?"

आखिरकार प्रबंधक महोदय की बात ही चली। विदाई समारोह भी हुआ और उसमें गरजपाल किसी शर्माती दुल्हन की तरह शरीक हुए। काफी भाषण और झूठी तारीफें झेलनी पड़ी। जहाँ कुछ लोगों ने उनकी शान में कसीदे पढ़े, वहीं कुछेक ने दबी जुबान से साथ में खाना न खाने की आदत पर शिकवा भी किया। ज्यादातर लोगों ने दबी-ढकी आवाज में गरजपाल की चिट्ठी का जिक्र भी कर डाला। इधर किसी की जुबान पर चिट्ठी का नाम आता और उधर गरजपाल जी का चेहरा सुर्ख हो जाता। एहसान अली ने एक गीत "लिखे जो खत तुझे" गाया तो सखाराम ने मुंबईया अंदाज में खतो-किताबत पर एक टूटा-फूटा शेर पढ़ा। समारोह की शोभा बने गयाराम जी जिन्होंने एक पंजाबी गीत गाया जिसका हिंदी अनुवाद कुछ इस तरह होता :

मीठे प्रिय परदेस चले

दूजा मीत बनाना नहीं

याद हमारी जब भी आए

खत लिखते शर्माना नहीं

चिट्ठी लिखें, डाक में डालें

दूजे हाथ थमाना नहीं

जीते रहे तो फिर मिलेंगे

मरे तो दिल से भुलाना नहीं।

तुर्रा यह कि हर भाषण, शेर, गजल या गीत में गरजपाल की चिट्ठी जरूर छिपी बैठी थी। मानो यह गरजपाल की विदाई न होकर उनकी चिट्ठियों का मर्सिया पढ़ा जा रहा हो। सबके बाद में गरजपाल जी ने भी दो शब्द कहे। आश्चर्य हुआ जब उन्होंने हमें हम सबको अपना बहुत अच्छा मित्र बताया और आशा प्रकट की कि उनकी मैत्री हम से यूँ ही बनी रहेगी। अंत में प्रबंधक महोदय ने (अपना कमीशन काटकर) सारे कर्मचारियों की ओर से उन्हें एक बेशकीमती पेन, कुछ खूबसूरत पत्र, पैड और बहुत से रंग-बिरंगे लिफाफे उपहार में दिए। यूँ समझिए कि पूरा डाकखाना ही दे दिया सिवाय एक डाकिए और डाक टिकटों के।

अगले दिन के लंच में कोई मजा ही न था। शीशपाल तो दफ्तर ही नहीं। एहसान अली को बड़ा अफसोस था कि गरजपाल की जासूसी में कुछ बड़ी कमी रह गई। वरना तो इतने दिनों में वासंती की असलियत खुल ही जाती।

दो-चार दिनों में सब कुछ सामान्य होने लगा। गरजपाल तो हमारे दिमाग से लगभग उतर ही चुके थे कि दफ्तर की डाक में कई रंग-बिरंगे लिफाफे दिखाई पड़े। एहसान अली की आँखे मारे खुशी के उल्लू की तरह गोल हो गई। वे चिट्ठियों को उठा पाते उससे पहले ही शीशपाल ने उन्हें लपक लिया। हमें लगा कि अब तो वासंती का भेद खुला ही समझो। मगर ऐसा हुआ नहीं। लिफाफों पर लिखी इबारत को पढ़ा तो पता लगा कि दफ्तर के हर आदमी के नाम से एक-एक चिट्ठी थी। भेजने वाले कोई और नहीं गरजपाल जी ही थे। उन्होंने हमारी दोस्ती का धन्यवाद भेजा था और लिखा था कि नई जगह बहुत बोर है और वे हम सब के साथ को बहुत मिस करते हैं। वह दिन और आज का दिन, हर रोज गरजपाल की एक न एक चिट्ठी किसी न किसी कर्मचारी के नाम एक रंगीन लिफाफे में आई हुई होती है। शायद लंच का आधा घंटा वह खाना खाने के बजाए हमारे लिए पत्र-लेखन में ही बिताते हैं।

https://www.hindiadda.com/garajapal-ki-chitthee/